श्री कृष्णः शरणं मम

बीत गई सो बात गई

क्या आप उन लोगों में से हैं जिनपर वर्तमान में दुखों का कोई पहाड़ नहीं टूटा हुआ, लेकिन जब तब बीती बातों और बीते दु:खों की चुभन इतना दुखी कर जाती है कि बहुत कोशिश करने पर भी मूड खराब हो जाता है और मन बहुत उदास हो जाता है। यदि हां, तो अपने मन से पूछिए कि क्या वह इन बेमतलब के दु:खों से उबर कर प्रसन्न होना चाहता है? मन का उत्तर सकारात्मक हो तभी लेख को आगे पढिये।

'मन किस कम्बख्त का चाहता है उदास रहना, लेकिन क्या करूं, बीते दुखों की यादें पिंड छोड़े तब न! तो सबसे पहले तो यह स्वीकार कर लें कि जीवन में दुख सबके आते हैं, और उस प्रकार के दुख भी बहुतों को आए हैं जैसे मुझे। मैं कोई असमान्य नहीं। तब हम अपने आप पर अति सहानुभूति रखना बंद कर देते हैं। दुख की यादों की आवभगत करना बंद कर दें। फलां घटना घटी थी.... ! सभी के साथ ऐसा होता ही रहता है। यादों को सीने से लगाने का प्रयत्न नहीं करेंगे तभी वे शांत होंगी।

लेकिन सबसे पहला काम तो यह निर्णय लेना है कि बीती बातें मुझे परेशान कर रही है तो मुझे इनका पोषण करना है कि इन्हें भूलने का प्रयत्न करना है? हम चाहेंगे कि हमें दुखी करने वाले को मौका मिलते ही मजा चखाएं, तो अवश्य ही उस दुख या अन्याय को पोसते रहना पड़ेगा। हम चाहें कि विषबेल फलती फूलती रहे और उसका जहर मुझ पर असर नहीं करे तो यह नहीं हो सकता। अतीत की बात के लिए भविष्य में बदला लेने का सपना संजो रहे हैं तो वर्त्तमान दुखी होगा ही। यह कीमत चुकानी पड़ेगी बदले के उस मौके की, जो शायद कभी भी मिले ही नहीं। बिना मोल इस दुनिया में कुछ नहीं मिलता। यदि तैयार हैं तो बेशक रहिए दुखी और उत्तेजित, नहीं तो बदले की बात, अभी, इसी क्षण छोड़ दीजिए पूरी तरह। किसी बात को पकड़ कर उसका बदला लेने का प्रयत्न किस तरह सर्वनाश ढाता है यह महाभारत में देख लीजिए–

द्रुपद और द्रोण गुरुकुल के मित्र थे। बचपन की भावनाओं में द्रुपद ने अपना आधा राज्य द्रोण को दे डालने की बात कह दी और द्रोण पहुंच गए उनके पास। द्रुपद ने इंकार कर दिया। प्रतिशोध की आग में द्रोण झुलसते रहे। अर्जुन को प्रेरित कर द्रुपद को बंदी बनाया, केवल यह कहने के लिए कि मैंने तुम्हें माफ किया! फिर प्रतिशोध की बारी आई द्रुपद की। उसने हवन किया और द्रौपदी प्रकट हुई। और फिर क्या हुआ सब जानते हैं।

द्रौपदी ने क्या किया था? मय के बनाए मायावी महल में दुर्योधन गिर गया तो हंस दी। वह हंसी चुभ गई दुर्योधन को। उसने प्रतिशोध लेने के लिए ही द्रौपदी को नग्न करना चाहा था। नतीजा क्या हुआ जानते हैं न!

इसलिए यह अच्छी तरह समझ लीजिए कि प्रतिशोध की बात मन से निकाल रहा हूं तो यह न मेरी कायरता है जिसके लिए मुझे आत्म ग्लानि हो और न ही मेरी उदारता है जिसके लिए आत्म श्लाघा। यह तो केवल एक विवेक पूर्ण निर्णय है ताकि मैं हल्का फुल्का मस्त जीवन बिता सकूं। मैं किसी पर एहसान नहीं कर रहा।

लेकिन प्रतिशोध का विचार हटा देने मात्र से मन पूरी तरह हल्का नहीं होगा जब तक हम क्षमा नहीं कर देंगे। इसका व्यावहारिक उपाय सृष्टिकर्ता के उस नियम को समझ लेना है कि हमारे जीवन में जो भी अच्छी या बुरी स्थिति आती है वे मेरे लिए Made to order है । मैंने अतीत में (पूर्व जन्म को भी शामिल कर लें) जैसे कर्म किये, जैसे विचारों का पोषण किया, जैसी कामनाए संजोई उसी के अनुसार ये सारी घटनाएं घट रही हैं। अपनी अच्छी बुरी स्थिति को शत प्रतिशत दोषी मैं ही हूं और 'बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेय की तर्ज पर मेरी बुद्धिमानी इसी में है कि अब और नेगेटिव विचार न पालूं। ***जिस क्षण आप इस ज्ञान को मात्र बुद्धि के बजाय हृदय में धारण दूसरों को दोष देना बंद कर देंगे उसी क्षण आपके अन्दर एक साधक का जन्म हो जायगा ।***

वास्तव में जब हम किसी बात के लिए दूसरों को जिम्मेदार मानते हैं तब क्षमा करना बड़ा मुश्किल होता है लेकिन अपने आप को क्षमा करना बहुत आसान। 'क्या करूं, मेरी आदत ही ऐसी है.... अमुक परिस्थिति में मुझे गुस्सा बहुत आ जाता है, तब मेरा अपनी जबान पर कंट्रोल नहीं रहता...' ऐसा कहने वाले कितने लोग दूसरों की uncontrolled जबान को आया गया कर पाते हैं

एक बात और समझ लें कि ***अतीत के दुखों का जो कारण रहा है उसके प्रति महत्वबुद्धि जब तक नहीं जाएगी तब तक लाख कोशिश कर लें, दु:ख भूलेगा नहीं।*** बच्चे एक गेंद, एक टाफी या खेल में हार जीत के झगड़े पर कभी कभी भयंकर मार पीट कर लेते हैं। फिर कट्टी हो जाती है जो कभी कभी तो तीन चार दिन तक भी चलती है लेकिन बड़े होने पर उनकी याद कभी कड़वाहट नहीं पैदा करती। जब दो पुराने, बचपन के मित्र प्रौढ हो जाने पर मिलते हैं तो मिल कर हंसते है- 'याद है कैसी गुत्थम गुत्था हुई थी हम दोनों में क्रिकेट के एक रन के सवाल पर? जिस मित्र के कारण बचपन में हड्डी तक टूट गई थी वह आज मिला तो लगा- मस्ती भरे क्षण लौट आए। उस समय क्या वह सोचता है- 'आह! आज मौका मिला, इसने चालीस वर्ष पहले मेरी पैर की हड्डी तोड़ी थी, आज मैं इसकी हाथ की हड्डी तोड़ कर ब्याज समेत वसूल करूगा।' कभी नहीं! ऐसा क्यों? क्योंकि क्रिकेट के रन के प्रति हमारी महत्वबुद्धि नहीं रही।

यानि महत्वबुद्धि है कारण और दु:ख है उसका प्रभाव। जब तक कारण को समाप्त नहीं करेंगे तब तक नाम जपने, 'योगा' करने या ध्यान लगाने जैसी क्रियाएं आपका गम गलत नहीं कर सकती, व्हिस्की के पेग की तो हैसियत ही क्या है? इसलिए आइये, हम विश्लेषण करें कि किस किस के प्रति महत्वबुद्धि हमें कैसे कैसे अवसाद का शिकार बनाती है :-

जगत की वस्तुओं के प्रति महत्वबुद्धि:- 'मुझे गहनों से बहुत प्रेम है और हमारी पैतृक सम्पत्ति के बंटवारे के समय वह आभूषण जो मेरे ही मैके से आया हुआ था, किसी दूसरे ने हथिया लिया और मैं भूल जाऊं .....!' कदापि सम्भव नहीं। यदि आप भूलने का प्रयत्न करेंगी तो खीज और कुंठा के सिवा कुछ हाथ नहीं लगेगा। 'मैंने हमेशा लाखों करोड़ों की जायदाद खड़ा करने का सपना देखा है और इधर मेरे गांव में दादाजी का बनाया हुआ मकान चाचाजी ने दबा लिया। और आप कहते हैं कि मैं भूल जाऊं? भले आज मेरे पास अपना कमाया सब कुछ है लेकिन अपने पैतृक अधिकार से वंचित कर दिए जाने की बात कैसे भूल सकता हूं?' जी नहीं, बिल्कुल मत भूलिए क्योंकि यह असम्भव है। 'मेरी मां ने मेरे विवाह की पहली वर्षगांठ पर कितने प्यार से वह हार मेरे गले में पहनाया था, वही चोरी हो गया.... चोर भले मेरे सारे गहने ले जाता.... लेकिन उस हार में तो मेरे प्राण बसते थे।' यदि आपके प्राण किसी हार, किसी जमीन किसी शो पीस में बसते हों तो क्यों सुखी होने की चिंता में प्राण दिये जा रहे हैं? अपने गमों में ही मस्त रहिए न।

इसलिए कोई वस्तु यदि आपके अतीत के दुख का कारण रही है तो वह दुख तभी जाएगा जब उस वस्तु के प्रति महत्वबुद्धि का त्याग करेंगे। वस्तुएं मेरे लिए हैं, मैं वस्तुओं के लिए नहीं। मुझमें इतनी स्वच्छन्दता होनी चाहिए कि वे मुझे अपना गुलाम बना कर न रख पाएं।

व्यक्ति के प्रति महत्वबुद्धि:- दुनिया में करोड़ों इंसान हैं। अच्छे भी, बुरे भी। उनका हम पर अप्रत्यक्ष रूप से असर भी पड़ता है। हमारे भ्रष्ट नेताओं ने 'मेरा भारत महान' का नारा लगाते हुए हमारे देश की जो दुर्दशा की है, उससे क्या हम अप्रभावित हैं? देश के बारे में सोचते हैं तो बड़ा दुख भी होता है। लेकिन क्या यह दुख उस प्रकार चुभता है जब 1975 में आपके पति ने जन्म दिन पर आपको शुभकामनाएं नहीं दी या आपकी पत्नी कुछ गलतफहमी की वजह से आपसे रूठ गई थी और सफाई पेश करने का मौका तक नहीं दिया था? जिस व्यक्ति के प्रति हमारी महत्वबुद्धि है उसकी जरा सी उपेक्षा, जरा से रूखेपन और तनिक सी कठोरता के पीछे सैंकड़ों दु:ख और क्लेश कुर्बान हैं।

जिस जिस के साथ हम भावनात्मक रूप से जुड़े हुए हैं वे सब बिल्कुल वैसे ही होने चाहिए जैसा हमें पसन्द आए। मानो इंसान नहीं हुए संजीव कपूर की रेसिपी हो गए- ठीक डेढ चम्मच नमक, एक चम्मच मिर्च और साथ ही आधी चम्मच चीनी भी। कैसे सम्भव है ऐसा? हमें

उनके अनुकूल बनना इतना दुखदायी लगता है तो फिर उन्हें भी अपने स्वभाव के अनुसार जीने का अधिकार दीजिए न। वे अपने ढंग से जीयें, आप अपने ढंग से। उनके जीवन में अनधिकार दखल मत दें और अपने मन के साम्राज्य पर भी उन्हें हावी होने न दें।

बहुत बार जीवन में ऐसी स्थिति भी आती है जब हम दूसरों के दुर्व्यवहार से बंधे रहने को मजबूर हैं। हम उनका त्याग कर चले जाना चाहते हैं, उनसे दूर.... शायद इस दुनिया से भी दूर.... लेकिन.... हमारे बच्चों का क्या होगा.... और हमारे पास करने को एक ही काम है कि जब खाली हुए तब आंसू बहाएं, घुटें, कुढें, और फिर किसी भयानक रोग से ग्रस्त हो कर अपने दु:ख, अपनी परेशानियां और बढा लें। यदि आपकी समस्या कुछ ऐसी ही है तो घुटिये मत, इसी क्षण त्याग दीजिए उस व्यक्ति को, और इसका मंत्र है - ***किसी व्यक्ति के प्रति महत्वबुद्धि का त्याग ही उसका त्याग है।*** रोज रोज के झगडों से तंग आ कर जो साधु बन जाते हैं वे भी तब तक मुक्त नहीं हो सकते जब तक घर संसार उनके हृदय से नहीं निकलता। दुनिया में ऐसा कोई रिश्ता नहीं जिसके बिना मनुष्य जी न सके। यदि ऐसा होता तो कम से कम 50% चिताओं के साथ एक चिता और जलती। किसी भी व्यक्ति से दु:ख मिला है तो उसके साथ रहते हुए भी मन से उपेक्षा का भाव विकसित करेंगे तभी उस दु:ख के hang over से आप अपना पिंड छुड़ा सकते हैं।

अपनी भावनाओं के प्रति महत्व बुद्धि:- 'कहावत ही है कि शरीर की चोट का घाव भर जाता है लेकिन बातों का घाव नहीं भरता। यह कहावत ऐसे ही तो नहीं बनी? फिर मैं किसी की बातों की चोट नहीं भुला पा रहा तो यह स्वाभाविक ही है।' बिलकुल ठीक कहते हैं आप। किसी ने आपकी भावनाओं को ठेस पहुंचाई है और उसके शब्द तीर की तरह आज भी चुभ रहें हैं तो यह उतना भी स्वाभाविक है जितना कि यह सत्य कि दुनिया में सभी दुखी हैं। इसे भी स्वीकार कर लीजिए न। क्यों चाहते हैं कि मेरे गम दूर हो जाए? कोई पुरानी दुखद बात चुभे नहीं यह साधारण मन के प्रतिकूल बात है। यदि आप सुखी यानि असाधारण बनना चाहते हैं तो कुछ असाधारण काम तो करना ही होगा। याद रखिए- ***भावनाएं मानव का आभूषण हैं किंतु भावुकता में बहना हमारी चारित्रिक दुर्बलता है।*** भावुक व्यक्ति को कभी भी शांति नहीं मिल सकती। किसी को आपकी भावनाओं की परवाह हो ही नहीं सकती, हो तब भी वह समझ ही नहीं सकता क्योंकि बहुत बार तो हम स्वयं ही अपने मन में निरंतर घुमड़ती भावनाओं को नहीं पहचान पाते। जब तक आपकी भावनाओं को ठेस नहीं लगेगी आप भावुकता त्यागेंगे नहीं। बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो हर मौके का फायदा उठा लेता है। भावनाओं की ठेस की याद जितनी बार चुभे, उतनी बार उसका इस्तेमाल वैराग्य बढाने में करें। उसने मुझे ठेस पहुंचाई, चलो अच्छा

हुआ, अब मुझे उसके साथ ज्यादा चिपकने की आवश्यकता नहीं होगी। देखिएगा आपका जीवन कितना हल्का हो जाएगा। आप अतीत के दुखों से तो मुक्त होंगे ही, भविष्य के बहुत से दुखों से भी बच जाएंगे।

अपने मान अपमान के प्रति महत्वबुद्धिः- आहा, इससे बड़ी तो कोई हस्ती ही नहीं जो दुखों की बुझती आग को हवा दे दे कर सुलगता हुआ रख सके। दूसरों से मान सम्मान की अपेक्षा रखते है तो पहले अपनी राय ईमानदारी से अपने बारे में समझ लें। आप अपने में कितने गुण देखना चाहते हैं लेकिन पाते नहीं। न जाने कितनी बार हम बड़ी आसानी से अपने लिए कह देते हैं- 'धत् तेरे की.... मैं भी कैसा बेवकूफ हूं।' लेकिन दूसरे किसी ने 1985 में मुझे बेवकूफ कह दिया था तो मुझे तब तक शांति नहीं मिलेगी जब तक कम से कम दस लोगों के सामने उसे गधा न कह डालूं। अहंकार की फुंसी मेरे हाथ पर उगी हुई है तो उस पर कोई हल्के से भी हाथ फिराएगा तो मुझे दर्द होगा।

दूसरों की नजरों में बड़ा कहलाने के बदले अपनी शक्ति अपने स्वयं की नजरों में ऊंचा उठने में लगाएं। आपका ध्यान दूसरों से हट कर अपने पर आएगा तो उनका महत्व घट जाएगा।

इन सबके साथ हमारी अपनी मान्यताओं, विचारों और जीवन शैली के प्रति भी इतना दुराग्रह और महत्वबुद्धि होती है जो बहुधा दुखदायी परिस्थितियां खड़ी कर देती हैं। कुछ लोग तो अपनी कमजोरियों और गलत आदतों के प्रति भी दुराग्रही होते हैं। वे चाहते है कि सत्संग में उनसे यह न कहा जाए कि अमुक व्यसन छोड़ दो। ये सब छोटी बातें होती हैं जो अपने आप में बहुत शक्तिशाली नहीं होती। लेकिन बहुत ही पतली टहनियों का गट्ठर भी बहुत शक्तिशाली हो जाता है। हम भी हर छोटी-छोटी बातों को मन के इस कोने में, उस कोने में, बड़ी सावधानी के साथ जमा जाते हैं। एक बार कोई घटना घटी नहीं कि हम उससे मिलती जुलती सारी घटनाओं को अतीत के पिटारे से निकालते हैं, उन्हें उलट पुलट कर देखते हैं और इससे भूत काल के भूत का निर्माण हो जाता है जो हमे एक सप्ताह तक अवसाद का शिकार बनाए रखने में सक्षम होता है। इस प्रकार का अवसाद उन्हें अधिक होता है जिनके पास या तो काम कम होता है या ऐसा काम होता है जिसमें केवल शरीर व्यस्त रहता है, मन बुद्धि खाली रहते हैं। ऐसे समय पर सावधान रहें। जीवन को कुछ ऐसा बनाए कि मन और बुद्धि भी व्यस्त रहे। मनोरंजन की क्रियाओं में भी पूरी रुचि लें। कभी कभी हम समझ लेते हैं कि हमें तो वैराग्य विकसित करना है इसलिए अच्छे कपड़े, साज सज्जा, सिनेमा, पार्टी, सबको त्यागना होगा। 'सादा जीवन उच्च विचार' के नाम पर 'नीरस जीवन नकारात्मक विचार' को अपना लेते हैं। किसी भी वस्तु या क्रिया का त्याग करने की आवश्यकता नहीं, बस अपने को उसके वश में आने से बचाने की सावधानी रखें। ऐसे सिनेमा या टीवी सीरियल न देखें जो समस्या प्रधान हों। विशेष कर जब किसी चरित्र में हम अपनी या अपने

जीवन की झलक पातें है तो उसे देखना बहुत अच्छा लगता है, लेकिन देख कर कुछ भी अच्छा नहीं होता। यदि दु:ख की शय्या का कोई कोना अछूता रह गया हो तो उसकी भी पूर्ति हो जाती है और हमें शर शय्या बनाने के लिए किसी अर्जुन की आवश्यकता नहीं पड़ती।

देखिए, कितने व्यवहारिक उपाय बताए अपने भूतकाल के भूत से छुटकारा पाने के, लेकिन इनमें से प्राय: ऐसे हैं जिनका विश्लेषण स्वयं करने बैठेंगे तो सोचेंगे- हां उपाय तो व्यावहारिक हैं लेकिन इन्हें व्यवहार में लाया कैसे जाए? एक फिल्मी गीत है- 'कोई जब तुम्हारा हृदय तोड़ दे, तड़पता हुआ जब कोई छोड़ दे, तब तुम मेरे पास आना प्रिये, मेरा दर खुला है खुला ही रहेगा, तुम्हारे लिए....' सच बात यही है कि जब तक अपना दर खोल दिल से लगाने वाला कोई प्रीतम नहीं मिलेगा तब तक दूसरों का तोड़ा हृदय जुड़ने वाला नहीं, तड़प मिटने वाली नहीं।

इसी तर्ज पर तो हमारे भगवान श्री कृष्ण सारी गीता समझाने, दुख को मिटाने के सारे नुस्खे बताने के बाद अंत में कहते हैं- **सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज, अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच:।** यानि मेरा दर खुला है तुम अन्दर चलो तो सही, मैं सारे दुखों से मुक्त कर दूंगा.... लेकिन हम उन्हें अपना प्रीतम माने तब तो बात बने ।

जब तक आपके मन में प्रभु की चाह नहीं जागेगी तब तक भगवान भी चाहे तो वस्तु, व्यक्ति, मान सम्मान आदि की चाह और महत्व आपके दिल से नहीं मिट सकते। हमारा मन है ही ऐसा, उसे हर वक्त पकड़ने के लिए कुछ न कुछ चाहिए, और वह ऐसा निर्मोही भी है कि अधिक महत्वपूर्ण तथा अधिक आनन्द देने वाला कुछ मिला तो पुराने की पर्वाह नहीं करता। चंचल स्वभाव के कारण उड़ उड़ कर बैठता तो है लेकिन टिकता नहीं- महत्व बुद्धि का त्याग बड़ी आसानी से हो जाएगा।

एक संत के पास एक गृहस्थ गया और पांव छू कर उन्हें प्रणाम किया। संत ने भी उसके चरण छू कर प्रणाम किया । उस व्यक्ति ने पूछा - 'महात्मा जी, यह क्या! आप मेरे चरण क्यों छूते हैं? संत ने पूछा-'पहले बताओ तुमने मेरे चरण क्यों छुए? 'क्योंकि आप सन्यासी है, त्यागी हैं। अपने घर संसार का त्याग कर दिया है, यह कितनी बड़ी बात है।' संत ने उत्तर दिया- 'मैंने भी तुम्हारे चरण इसलिए छुए कि तुम मुझसे बड़े त्यागी हो। मैंने तो अनमोल प्रभु को पाने के लिए क्षुद्र संसार का त्याग किया है तुमने संसार को पाने के लिए अनमोल प्रभु का त्याग कर रखा है, कितना बड़ा त्याग है तुम्हारा!'

प्रभु के प्रति महत्वबुद्धि जागृत करें तभी वस्तुओं, व्यक्तियों, अपनी मान्यताओं तथा मान आदि के प्रति महत्वबुद्धि जाएगी अन्यथा नहीं। युवा होने के बाद जब किसी लड़के का मन किसी लड़की पर आ जाता है तो दूसरा सब कुछ बेकार लगने लगता है। भगवान को अपना प्रेमास्पद बनाएं। संसार का प्रेम मुझे कैसे मिले इसकी चिंता इस चिंतन में बदल जाएगी कि ठाकुर

जी के प्रति मेरा प्रेम कैसे बढे? तब आपका दिल दिमाग खाली भी नहीं रहेगा कि छोटी छोटी बातों को गांठें बांध कर रख सके।

बहुत बार हम संतों के पास जाते है और उनसे पूछते हैं, 'महात्मा जी, हमारा अनिष्ट करने वाले से भी हम प्रेम करें, यह कैसे सम्भव होगा हमें बताइये।' अनिष्ट करने या हमारा कुछ छीन लेने वालों से प्रेम करने की बात क्या करें जब कि हम उससे प्रेम नहीं कर सकते जिसने हमें कितना कुछ दिया है और देता ही चला आ रहा है। पल पल उनका प्रयोग करते हुए भी हम उससे प्रेम नहीं कर सकते। कितने कृतघ्न, कितने बेदर्द हैं हम! और वैसे ही बेदर्द लोग हमारे चारों ओर हैं। फिर उनके लिए जरा सा भी कुछ कर हम उनसे बदले में प्रेम, मान सम्मान, अपनी भावनाओं की कद्र आदि बड़े बड़े लाभ पाना चाहते हैं। कृतघ्नता दे कर कृतज्ञता पाना चाहते हैं! जिसने इतने प्रेम से हमारे लिए इतनी सुन्दर दुनिया बनाई उसका कोई मोल नहीं और दूसरों को प्रेम बांटने का दम भरते हैं!! इसलिए बन्धुओं, चिंतन करो उसके प्रेम का और इस चिंतन में सारी चिंताओं को लीन हो जाने दो।

प्रेम कैसे हो? याद करें जब पहली बार आपने अपनी मंगेतर को देखा था। कैसे हो गया था प्यार? क्योंकि तब यह भावना आई थी कि अब तो यही मेरा/मेरी सब कुछ है। यह संस्कारवश होता है और हमें पता भी नहीं चलता। भगवान किस प्रकार मेरे सब कुछ हैं यह चिंतन करें और अपने मन को संस्कारित करने का प्रयत्न करें। उसे आसमान में बैठी कोई सत्ता या मांगें पूरी करने का जादुई चिराग मात्र न मानें। हम उसकी मूर्ति से यही तो आशा करते हैं- उसके माथे पर चंदन रगड़ें और वह तैयार हो जाए-'क्या हुक्म है मेरे आका?' उसकी भावनाओं को भी तो समझें। देखिए, वह मंदिर में कब से हाथ फैलाए खड़ा है, लेकिन उसे **हम** नहीं मिलते, हमारी मांगों की फेहरिस्त भर मिलती है।

उसकी 'पूजा' करना बंद कर दें, उसके 'पास' बैठने का प्रयास करें। जब व्यापारी किसी अफसर से काम निकालना चाहता है तो उसके लिए कुछ मिठाई वगैरह ले कर जाता है जिसे मुहावरों की भाषा में 'भेंट पूजा' कहा जाता है। ऐसी चापलूसी से जगत के उस मालिक का कुछ बनने बिगड़ने वाला नहीं। वह हंसता हुआ मुरली बजाता रहता है। आपसे ज्यादा स्मार्ट है वह।

हम लोग भगवान से सम्बन्ध स्थापित एक और तरीके से करते हैं- जप या पाठ के द्वारा। पाठ पूरा हो गया तो हमें लगता है कि आज का कर्त्तव्य पूरा हो गया। नहीं कर पाने से टेंशन रहता है । लेकिन ध्यान दें -क्या पाठ के वक्त आपका ध्यान प्रभु के चरणों में या उन शब्दों के अर्थ में था जिनका आप उच्चारण कर रहे थे? त्वमेव माता च पिता त्वमेव .... कौन ऐसा है जिसने बचपन से प्रौढावस्था तक हजारों बार यह स्तुति नहीं बोली, लेकिन क्या हजारों में से कभी एक बार भी ऐसा अनुभव किया कि भगवान हमारी मां है? पाठ करना मन के लिए बड़ा सुविधा

जनक है इसलिए सभी कर लेते हैं। नियमित हनुमान चालीसा करने से हमारी याददाश्त इतनी तगड़ी हो जाती है कि मन को एक क्षण के लिए भी इसमें 'लगना' नहीं पड़ता। वह स्वतन्त्र रहता है मक्खी की भांति कभी मल और कभी माल पर बैठने के लिए। वह भी मस्त और हम भी खुश कि आज की पूजा पूरी हो गई। सावधान रहें, यदि ऐसा होता है तो पूजा के आसन पर बैठने के समय को छोटा करें। पाठ के बदले अपने हृदय के तारों को उसके हाथों में सौंपने का प्रयत्न करें और सुने उसकी मधुर झंकार। दिन में कई बार ऐसा करें- जब जरा देर को भी समय मिला। लेकिन एक बार में अधिक देर तक न बैठें। आपका मन एक बांसुरी है और वह कभी इस छिद्र पर हाथ रख कर कभी उस छिद्र पर हाथ रख कर उसे कैसे बजा रहा है यह देखें। लेकिन उस समय नहीं जब आप उसके 'पास' बैठे हों। यह काम उस वक्त करें जब शरीर काम में लगा हो और मन बुद्धि खाली हों। तब आप अपने मन को सकारात्मक ढंग से व्यस्त रख पाएंगे। इस अभ्यास के बाद जब आप उसके पास बैठेंगे तब शुद्ध प्रेम का राग बजाती उस मुरली की धुन को सुन पाएंगे जो आपको जीवन का राग सुनाएगी और निर्मल रस से सराबोर कर देगी।

ॐॐॐ